8

सुनना, गुनना और सुनाना कहानी का

हरदर्शन सहगल*

कहानी सुनते समय बच्चे न केवल कहानी का आनंद लेते हैं बल्कि साथ-साथ कहानी गुनते और रचते भी रहते हैं। कहानी के एक-एक शब्द का आनंद लेते हुए कहानी को आत्मसात् भी करते हैं। कहानी के पात्रों के साथ जीते हैं। लेकिन यह सब तभी संभव हो सकता है जब कथावाचक, श्रोता और कहानी का पाठक इन्हीं से संबंधित कुछ बातों को इस लेख में पिरोया गया है।

कहानी सुनना या सुनाना कोई मशीनी कार्य नहीं है। यह तो हृदय की भावना है। बार-बार लगता है, हम सब चलती-फिरती कहानियाँ ही तो हैं। हर क्षण हमारे भीतर कहानी जन्म ले रही होती है। उसे हम कह पाते हैं या नहीं, यह दूसरी बात है। जैसे फूल खिल रहे होते हैं। हवा चल रही होती है। टप-टप वर्षा, बूँदें बरसा रही होती है। बिजली चमकती है। सूरज, चाँद, सितारों आदि-आदि प्राकृतिक क्रियाकलापों का होना, मात्र बाहरी वातावरण घटनाचक्र ही नहीं होता, यह हमारे भीतर, अंतस में भी घट रहा होता है।

इन सब बातों को आसानी से समझना हो, तो कहा जा सकता है कि अपने दु:खों (त्रासदी), अनमोल वस्तु दोस्त की प्राप्ति पर उन्हें कहने के लिए कोई तैयारी नहीं करनी पड़ती। कोई तपस्या नहीं करनी पड़ती। हमारे चेहरे की रंगत और हावभाव सब प्रकट कर देते हैं। उचित शब्द, आप से आप जुबान पर आ जाते हैं। मदारी, भिखारी का आना, कुत्तों का भौंकना, साधारण-सी बात पर मुहल्ले में झगड़ा होना, पक्षियों का पेड़ों, मुँडेरों पर बैठना, चहचहाना आदि एक जैसी घटनाएँ हैं परंतु सभी लेखक इन पर ठीक एक जैसा नहीं लिखते। थोड़ा अलग-अलग तौर-तरीके से लिखते हैं। यह इसलिए कि वे सब इन्हें अपने-अपने स्तर पर देखते हैं, समझते हैं, अनुभव कर, आत्मसात करते हैं और वैसा ही कह जाते हैं। इसीलिए तो हमें हर रोज़ एक जैसे विषयों पर अलग-अलग तरह की कई कहानियाँ पढ़ने को मिलती हैं। हमारी कल्पनाशीलता भी हमारी कहानियों में चमक पैदा कर देती हैं।

कहानियाँ सुनते वक्त बच्चे भी कहानियाँ, गुन-सुन, रच रहे होते हैं। तभी तो वे कहानी के बीच-बीच में हस्तक्षेप करते हैं। "नहीं! नहीं!! ऐसा कैसे हो सकता है"? ठीक है, उसे

* 5-ई-9 'संवाद' डुप्लैक्स कॉलोनी, बीकानेर, राजस्थान-334003

थोड़ी और मार पड़ती तो अच्छा रहता"। "मज़ा आ गया।" मैं लिखता तो ऐसा लिखता। बड़ा होकर मैं जज बनूँगा। गरीबों के साथ न्याय करूँगा। डॉक्टर बनूँगा। गरीब मरीज़ों से फीस नहीं लूँगा। अगर यह कहानी मैं लिखता तो इसमें यह भी दिखाता। "रंगीन कोट" सी.बी. टी. से पुरस्कृत एक ऐसी ही कहानी है।

एक कहानी में बच्चा शरारत से दादी का चश्मा छिपा देता है। दादी गिर जाती है। हड्डी टूट जाती है। बच्चा आगे से ऐसी शरारतें न करने की शपथ लेता है। ऐसे ही सब कहानियों से बच्चों को कुछ-न-कुछ सीख-प्रेरणा मिलती है। जिससे वे आगे बढ़ने, कुछ कर दिखाने, कुछ बन दिखाने की ठान लेते हैं।

पहली बात को ज़ारी रखते हुए मैं अपनी बताता हूँ। मैं बहुत छोटे बच्चों को कहानी कैसे सुनाता हूँ। उन्हें पेट से अपने पाँव के तले से उठाता-झुलाता हूँ या घुटनों के नीचे से झूलाता हूँ। कुछ बच्चे मेरी अगल-बगल होते हैं। सभी शोर मचा रहे होते हैं- 'कहानी सुनाओ। कहानी सुनाओ। जल्दी। और कोई बात मत करो।' मैं भी बच्चों के साथ बच्चा हो जाता हूँ। मैं भी शोर मचाता हूँ। ज़ोर-ज़ोर से हँसता हूँ। बच्चों को गुदगुदी करता हूँ। बच्चे हँसते हैं। लाख-लाख मोती झरते हैं। कहानी सुनाओ।

कोई भी कहानी पहले से निर्धारित नहीं होती। आँखें बंद करके, ऊल-जुलूल कुछ भी बोलने लगता हूँ- ऐसा था ना। वह है ना। क्या है। ठीक से बताओ। कौन, सपेरा नेवला। अरे भई! वह बंदर का गुलाबी बच्चा। बड़ा शरारती था। हाँ! हाँ!! पीला पिल्ला। और तोता 1— क्या सुना रहे हो। तोते की या बंदर की? आढ़ी-तिरछी रेखाएँ खींचते चले जाने से कोई आकृति मन के अनुकूल बन ही जाती है— हाँ! हाँ!! कबूतर वाली सुनाऊँगा। हाँ भई! हाँ!! कबूतर एक नहीं चार थे। उन्होंने आपस में शर्त लगाई थी— क्या शर्त लगाई थी?

इस प्रकार धीरे-धीरे कहानी आकार पकड़ने लगती है। दो-चार बार सुनाने से कहानी पूरी तरह से पककर तैयार। "शर्तबाज़ी" लिखी गई। "पेड़ पर विवाद" "धरती और आकाश" "रंगीन अदालत" "आइए, खाइए, जाइए" "काका" "हाँ भी न भी" दीवाली पर ही आठ कहानियाँ हैं। और भी बहुत-बहुत-सी। यही हाल "भालू ने खेली फुटबाल" का था। बच्चों को इतनी भाई कि उन दिनों कहते— बस वही सुनाओ और कुछ नहीं। एक बात यहाँ, यह भी जोड़ना चाहूँगा कि कहानी सुनाने वाले को बार-बार यह कतई न कहना पड़े कि भई! ज़रा गौर से सुनो। कहने का ढंग, बीच में थोड़ा रुकना, स्पष्ट सरल शब्दों का चयन कहानी को रोचक बनाते हैं। सुनने-सुनाने वाले भूख-प्यास तक भूल जाते हैं।

इसके बाद थोड़े बड़े बच्चों की कहानियों की बात कर ली जाए—

यदि कोई चित्र ठीक से न खींचा गया हो। टेढ़ा-मेढ़ा हो। कुछ-कुछ भोंडा लगे, तो हम उसे पसंद नहीं करेंगे। कहेंगे— यह तो कुछ गड़बड़ है। अच्छा चित्र सजीव होता है।

यही हाल (कसौटी) कहानियों के चरित्रों, उनके आपसी रिश्तों, घटनाओं, दृश्यों, माहौल (वातावरण) पर भी लागू होता है।

अच्छी (उत्कृष्ट) कहानियाँ, उपन्यास पढ़ते समय सहसा हमारे मुँह से निकल पड़ता है, "ओह! यही सच है। इनमें हमारे पड़ोसियों, हमारे सहपाठियों, संबंधियों की हू-ब-हू (जैसी की तैसी) तस्वीरें हैं। हम उन चरित्रों के साथ घुलमिल जाते हैं। उन (वर्णित) दृश्यों में खो जाते हैं। कल्पना उड़ान भरती है। सुनने, पढ़ने वाले अपनी बात (हस्तक्षेप) भी करने लगते हैं- हाँ! हाँ!! ऐसी ही होनी चाहिए, हमारी पाठशालाएँ। अध्यापक-अध्यापिकाएँ। ऐसे ही होने चाहिए हमारे नियम, कानून। ऐसा ही बराबरी का समाज हम चाहते हैं। जगमगाता देश। चरित्रवान नेता/डॉक्टर/प्रशासक/इंजीनियर/ और ऐसा कुछ न हो, जिससे हमारे राष्ट्र की छवि बिगड़े। अच्छा (शोषण मुक्त) समाज बनाने, निर्धनता हटाने, अन्याय, अत्याचार बंद करने के लिए, हम सब मिलजुलकर यत्न (संघर्ष) करें।

दिन-रात, जिन चीज़ों को हम देखते हैं, जैसे गंदी (दूषित) जलवायु। गरीबों, पशु-पक्षियों पर होते अत्याचार। ऐसी ही बहुत-सी बातें (चिंताएँ) हैं। समय के साथ यही घटनाएँ, हालात हमारी वर्तमान कहानियों में आपसे आप आ शामिल होते हैं। उत्सव, मेले आते हैं। नई-नई ऋतुएँ आती हैं। इन पर लिखी कहानियाँ भी हमें बहुत भाती हैं।

अब कहानी पढ़ने और सुनाने को लेकर अपने अनुभव बताता हूँ। एक बार *एन.बी.टी.* दिल्ली तथा उरमूल ट्रस्ट, बीकानेर ने मुझे तथा स्व. मुहम्मद सदीक साहब को कई गाँवों में गीत, कहानी सुनाने भेजा था। सदीक साहब का गला बहुत सुरीला तथा सधा हुआ था। उन्होंने गा-गा कर हर विषय के गीत सुनाए। बड़े और बच्चे उनसे बँध गए।

मैं अपनी बच्चों की कुछ कहानियों की किताबें साथ लेकर चला था। मैं खूब ऊँचे स्वर में पढ़-पढ़कर बच्चों को समझाने की कोशिश करता। कोई भी मेरी तरफ़ ध्यान नहीं देता। यानी मैं सब जगह से फेल होकर लौटा।

कुछ वर्षों बाद कानपुर की संस्था, 'बाल कल्याण' द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम में मैंने पूरे हावभाव के साथ कहानी सुनाई। कहानी का शीर्षक था, 'शर्तबाजी'। यह चार कबूतरों को लेकर लिखी गई थी, परंतु मैंने ज़बानी सुनाई। बहुत बड़ा हाल, बहुत सारे बच्चों और कुछ बड़ों से खचाखच भरा हुआ था। सब के सब विशेषकर बच्चे मेरे साथ झूमने लगे। बाद में सब बच्चों ने मेरे साथ हाथ मिलाया। यानी मैं इस बार वहाँ से सफल होकर लौटा।

परंतु ज्यों-ज्यों हम बड़े होते हैं, कहानियों के एक-एक शब्द का आनंद लेते हैं। कहानी को जीते, आत्मसात् करते हैं। उनकी संवेदनाओं के मर्म तक पहुँचते हैं। यह सब होता है, कहानी पढ़कर।

तो भैया! कहानी सुनने और पढ़ने का अपना-अपना महत्त्व है। तो भी हम सब हर कहानी की मूल भावना को समझकर उनसे प्रेरणा लेते हैं। जीवन जीने की कला सीखते हैं। इनसे हमारे जीवन की राह आसान हो जाती है।

❑❑❑